धर्म जीवन

दिसम्बर 2004

✡ भगवान देवात्मा एक समाज सुधारक के रूप में

✡ भगवान देवात्मा देव धर्म संस्थापक के रूप में

✡ भगवान देवात्मा ईश्वरवादी न रहकर विश्ववादी के रूप में

✡ भगवान देवात्मा धर्म के वैज्ञानिक के रूप में

✡ भगवान देवात्मा इष्ट देव के रूप में

✡ देवात्मा की पूजा क्यों?

✡ महोत्सव के कार्यक्रम

शेष भाग पेज 19 का

नहीं करता, आंखे पाक आंसुओं से नहीं डबडबाती, तब तक न देव रूप सच्चे अर्थो में सामने आता है, न हृदय ही सरस होता है और न ही कोई पूजा ही होती है।

इस पूजा के निम्नलिखित लक्षण आवश्यक हैं :

1. भगवान देवात्मा के देवरूप की अतिशय सुन्दर, मोहनी और अद्वितीय झलक का चमकना।

2. उस आकर्षणीय झलक के आगे साधक का देव चरणों में देर तक शीश का टिकाना, उसी हालत में टिके रहने को दिल करते रहना, इस प्रकार सिर टिकाए रहने पर समय बीतने पर भी सुध न रहना, आंखो का पाक आंसुओं से भरना।

3. हृदय का उच्च रस वा सरूर से भरना। हृदय का गदगद होना, उच्च सौभाग्य व उच्छवास से भरना। बेबस ऐसे वाक्यों के उच्चारण के लिए दिल का उछलना व यह वाक्य बेबस मुंह से निकलने

1. आप धन्य हो, आप धन्य हो, 2. जय देव गुरू, श्री देव गुरू 3. अपने प्रकृत रूप के किसी अंश दर्शन।

भगवान देवात्मा की ज्योति के भीतर देवरूप की अतिशय महान झलक के साथ साधक का अपने प्रकृत और नीच रूप को भी देखना, उपलब्ध करना और अपनी नीचता के प्रति बार बार गहरा दुख महसूस करना ज़रूरी है।

साधक को अपना मनुष्य रूप प्रकृत रूप में दिखाई देता है। उसको अपना आप अदना, नीच, दुष्ट, महा पिशाच, महा मलीन, महा अपराधी, अतिशय अश्लील, धुर्त और भ्रष्ट बार बार दिखाई देता है। उसका हृदय अपना रूप देखकर सच्चे शोक और दुख से भरता है, अपना आप घृणित, मुंह काला किए जाने के योग्य, जूते मारे जाने के योग्य, कड़ी से कड़ी सज़ा के योग्य महसूस होता है। अपना आप आत्मिक कोढ़ी दिखाई देता है। अपना आप उस देवरूप का आश्रित और पूर्ण मुहताज और पूर्ण निर्भर महसूस होता है।

जितनी भगवान देवात्मा की सत्य महिमा दिखाई देती है, उतनी अपनी तुच्छता और नीचता दिखाई देती है।

भगवान देवात्मा का चारों जगतों का अनुरागी रूप दिखाई देता है। अपना आप अपने ही हित से अंधा और अपनो का ही वैरी रूप दिखाई देता है।

जिस मनुष्य का ध्यान अपनी नीचता की ओर नहीं जाता उसको अपनी नीचता अखरती नहीं, दुखी नहीं करती, सताती नहीं तो उसका कोई सच्चा साधन नहीं होता।

भगवान देवात्मा की पूजा द्वारा नीच जीवन कटना शुरू होना भी जरूरी हैं, उसका एहसास होना जरूरी है, विशेष रूप से घमंड, नीच घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ और स्वेच्छाचारिता का घटते जाना आवश्यक है।

परमपूजनीय भगवान भगवान देवात्मा फरमातें हैं जो जन भगवान देवात्मा की पूजा करने के "इच्छुक हों और इच्छुक होकर उनकी सच्ची आत्मिक पूजा करने के योग्य बन गए हों और इस सच्ची आत्मिक पूजा के साधन के बिना, अपना कोई दिन व्यतीत न कर सकते हों और वह सच्ची आत्मिक पूजा के साधन को प्रतिदिन निष्ठापूर्वक पूरा और उसके सच्चे फलों को अपने दैनिक जीवन द्वारा प्रदर्शन कर सकते हों" वह ही भगवान देवात्मा की सच्ची पूजा कर सकते हैं। गुरु महाराज फरमाते हैं : "जब तक तुम्हें देवरुप का कोई बोध न हो तब, तक तुम उसके सच्चे पुजारी नहीं बन सकते।"

(बलदेव सिंह)

धर्म जीवन

खण्ड 16 अंक 12
दिसम्बर 2004
वार्षिक मूल्य 50 रूपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

भगवान देवात्मा एक समाज सुधारक के रूप में

भगवान देवात्मा के देवरूप को समझना मनुष्यात्माओं के लिए महा कठिन काम है। परन्तु उनके जीवन के कुछ ऐसे सुन्दर पक्ष हैं, जिन्हें हम कुछ न कुछ समझ वा अनुभव कर सकते हैं। हमने अनेक समाज सुधारकों को पढ़ा, सुना वा देखा है, परन्तु पू० भगवान के सत्य और शुभ अनुराग ने उन्हें अनोखा समाज सुधारक बना दिया। यह उनके जीवन का एक बहुत सुन्दर पक्ष था।

23 साल की आयु में जब वे लाहौर पधारे, तब से लेकर 79 वर्ष की आयु तक उनका जीवन समाज का भिन्न-भिन्न रूप में सुधार का एक अद्भुत उदाहरण है। वह उस हर संस्था वा मनुष्य की ओर आकर्षित हो जाते थे जो समाज की कुरीतियों को दूर करने या समाज की भलाई के लिए कुछ करते थे। इसी कारण 23 वर्ष की उम्र में लाहौर आते ही वह ब्रहमो समाज की ओर आकर्षित हुए क्योंकि ब्रहम समाज, धर्म और समाज की कई मिथ्याओं और बुराईयों को हटाने के प्रशंसनिय अंदोलन में कार्यरत थी। बेशक ब्रहमों समाज ने धार्मिक पूजा पाठ में सुधार किए परन्तु उसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक बुराईयों को हटाने का था। वास्तव में उन्होंने धर्म को समाज सुधार का माध्यम बनाया। उन दिनों धर्म को पूजा पाठ तक ही सीमित रखा गया था। सामाजिक सुधार व कल्याण का पूरा निरादर किया हुआ था। ब्रहमों समाज की यह विशेषता थी। उनके काम का मुख्य केन्द्र सामाजिक कुरीतियों को दूर करना था और पूजा पाठ दूसरे स्थान पर था। उनका समाज सुधार का काम भगवान देवात्मा के हित अनुराग के अनुकूल था।

भगवान देवात्मा के भीतर तो बचपन से समाज सुधार का प्रबल भाव था। स्कूल के दिनों में जब उन्होंने पढ़ा कि बच्चों के लिए जेवर पहनना हानिकारक है, तो उन्होंने उस समय छोटी उम्र में जेवर पहनने से इंकार कर दिया कि जबकि जेवर पहनना परिवार की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक समझा जाता था। श्री अकबरपुर रहते हुए ही उन्होंने यह अनुभव किया कि पढ़ना जहां लड़कों के लिए अच्छा है, वेसे ही लड़कियों के लिए भी लाभदायक है। उस समय वहां के लोगों के बहुत संकीर्ण विचार थे, परन्तु उन्होंने अपनी भावजा वा भतीजी को पढ़ाना शुरू किया। उन्होंने अपनी अनपढ़ पत्नी को हिन्दी ही नहीं बल्कि बांगला भाषा भी पढ़ाई। उनमें भाषण देने की योग्यता पैदा की और नाना प्रकार के समाज सुधार के कामों में प्रशिक्षित किया।

जब वह रूड़की पढ़ने के लिए गए, तो उनके भीतर विरासत में मिले छूतछात के भाव थे। वह केवल कुलीन ब्राह्मण के हाथों का पका खाना ही खा सकते थे, परन्तु जब उन्हें यह अनुभव हुआ कि छूतछात गल्त है, उन्हें साधारण रसोई में और लड़कों के साथ खाना शुरू कर दिया। उन्होंने जब यह अनुभव किया कि हिन्दु मुसलमानों में भेदभाव भी मिथ्या है, तो उन्होंने मुसलमान की दुकान से लेकर मिठाई खाई। छोटी उम्र में यह छोटी छोटी घटनाएं उनके हित अनुराग से परिचालित होकर सामाजिक बुराईयों के प्रति उनके भावों को दर्शाती हैं। परन्तु यह सुधार उनके व्यक्तिगत रूप थे। यह व्यापक समाज में आन्दोलन नहीं था। जैसे महात्मा गांधी छूतछात को बुरा मानते थे, यदि वह इस भावना को अपने तक ही सीमित रखते तो यह उनका स्वयं का सुधार था, समाज का नहीं। इस बुराई के प्रति व्यापक आंदोलन चलाकर उन्होंने इस बुराई को मूल से हटाने के लिए संग्राम किया।

भगवान देवात्मा का हित अनुराग इतना प्रबल था कि धीरे धीरे उन्हांने समाज की हर बुराई को जड़मूल से उखाड़ने का महान कार्य आरम्भ किया। उनके इस लक्ष्य में जो व्यक्ति वा संस्था उनकी सहायक बनती गई, वह उसकी ओर आकर्षित होते गए। इसी भावना से लाहौर आने पर उन्होंने देखा की ब्रह्मो समाज तरह तरह की बुराईयों के विरूद्ध आवाज उठा रही है, तो वह इस धारा के निकट हो गए। उन्होंने ब्रह्मो समाज में हिंदु संस्थाओं के सुधार के प्रोग्राम को अपनाया और उसको ऊंचा उठाने में बहुत योगदान दिया। वह उच्च कोटि के वक्ता थे। यद्यपि वह समाज की बुरी रस्मों, जैसे बाल विवाह, ज़ात पात, छूतछात, ज़बरदस्ती विधवा रहने की प्रथा, स्त्रियों को शिक्षा न देना आदि के विरूद्ध बोलते थे, तब भी हजारों संकीर्ण विचार रखने वाले जन उन्हें सुनने आते थे। 1875 में उन्होंने दो पत्रिकाएं 'बरादरे हिंद' और 'हिंदु बांधव' अपने खर्चे पर आरम्भ की। इसके विषय में लिखा कि इनके निकालने का उद्देश्य समाज में बुराईयों के प्रति जागृति पैदा करना थ। अपने भाषणों वा लेखनी के द्वारा उन्होंने समाज में आंधी पैदा कर दी। जिससे हानिकारक और नसलों से चले आ रहे हानिकारक रीति रिवाजों के जड़ से उखाड़ने में बहुत सहायता मिली। उनकी लेखनी और अवाज़ में एक अजब तासीर थी, क्योंकि वह शुभ अनुराग से प्रेरित थी।

उन्होंने विधवा पुनर्विवाह की पुष्टि ही नहीं की बल्कि अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के पश्चात उन्होंने न केवल विधवा बल्कि बंगाली विधवा के साथ शादी की। इसके विषय में उस समय 'ट्रिब्यून' में लिखा था कि यह विवाह समाज सुधार में एक ऐतिहासिक घटना है आजकल तो यह बातें काफी आम हो रही है। आज से एक शताब्दी से भी बहुत पहले यह एक पहाड़ गिरने के समान था।

ब्रह्मो समाज की ओर उनका आकर्षण उस संस्था की समाज सुधारक छवि को लेकर था। उनके ब्रह्मो समाज में रहते हुए उनके संग्राम से कितने जनों ने नीच जीवन से छुटकारा पाया और सात्विक जीवन में विकास पाया। परन्तु समय के साथ ब्रह्मो समाज में भी उन बुराईयों का मौखिक विरोध देखकर और विशेष रूप से जब ब्रह्मों समाज के नेता बाबु केशब चन्द्र सेन ने अपनी 14 वर्ष की बेटी का विवाह एक ऊंचे खानदान में कर दिया, भगवान देवात्मा ने उनके विरूद्ध आन्दोलन शुरू कर दिया, जिसमें कुछ जन भगवान देवात्मा के साथ खड़े हुए और कई केशव चन्द्र सेन जी के पक्षपाती अनुयायीयों ने उनके अनैतिक व्यवहार की पुष्टि के लिए अनेक

अति घृणित हथकण्डे प्रयोग में लाने आरम्भ कर दिए, जिससे गुरु महाराज को यह स्पष्ट हो गया कि ब्रह्मो समाज में उनके उच्च जीवन पैदा करने के कार्य के लिए अनकूल परिस्थितयां नहीं हैं। उन्होंने ब्रह्मो समाज की नई शाखा साधारण ब्रह्मो में काम करना आरम्भ किया। लेकिन वहां पर भी वातावरण उन्हें अनुकूल नही लगा। इसमें भी उन्होंने देखा कि उच्चचरित्र और पर सेवा के लिए यहां भी कोई उत्साह नहीं, केवल पाठ पूजा और उपदेशों की ही धुन है। समाज सुधार का काम न होते देखकर उन्होंने 1887 में देव समाज की नींव रखी।

उसके बाद स्वतंत्रता पूर्वक काम करने का उन्हें अवसर मिला। और वे पंजाब के महान समाज सुधारक माने और सम्मानित किए जाते थे। उन्नीसवीं शताब्दी में स्त्रियों पर अन्याय पूर्ण प्रथाओं ओर रिवाजों के प्रति जाग्रति आरम्भ हुई। एक एक पहलु में सुधार के लिए और भी सुधारक मैदान में आए, परन्तु भगवान देवात्मा ने स्त्रियों के सुधार का जो बीड़ा उठाया, वह स्त्रियों के सर्वांग हित से प्रेरित था। इस प्रकार वह समाज के ढांचे को ही बदलने में लग गए। सर्वप्रथम उन्होंने सोचा कि स्त्रियों को अधिकार दिलाने का एक ही तरीका है कि पहले उन्हें शिक्षित किया जाए तो वह अपने अधिकारों के प्रति जाग्रित होकर उन्हें पाने के लिए संग्राम कर सकती हैं।

जब उन्होंने 1887 ई में देव समाज की स्थापना की, तो उन्होंने स्त्री शिक्षा के लिए संस्थाएं खोलना अपने काम का एक आधार बनाया। वह पहले हिंदु सुधारक थे, जिन्होंने पंजाब में लड़कियों के लिए (फिरोज़पुर 1900 ई. में) हाई स्कूल खोला। इस स्कूल की एक विद्यार्थी पंजाब में पहली एम.बी. बी.एस. डॉक्टर बनी, जब देश स्वतंत्र हुआ तो तो वह लेडी हार्डिंग मैडीकल कालिज की पहली भारतीय प्रिंसीपल बनीं। इस स्कूल की एक लड़की ने पंजाब में सर्वप्रथम B.A. B.T. पास की। स्कूल बढ़ते बढ़ते कालिज और फिर एक 'मिनी यूनिवर्सिटी' Complex बन गया। जिसमें आर्टस कालिज, ट्रेनिंग कालिज और साईंस के विषय भी पढ़ाए जाते हैं। पंजाब के शिक्षा मंत्री ने फिराज़पुर के एक दीक्षांत भाषण में कहा था कि गर्वनमैंट देव समाज की आभारी है कि उन्होंने इस संस्था द्वारा पंजाब को 50 प्रतिशत अध्यापिकाए दी हैं। पंजाब के एक मुख्य मंत्री ने अपने ग्रेज्युएट दीक्षांत भाषण में कहा कि इस कालिज की नीति शिक्षा इस संस्था को अद्वितीय बनाती है। इसके अतिरिक्त अम्बाला में स्कूल और कालिज लड़कियों के लिए ही चल रहे हैं। चण्डीगढ़ में स्कूल और ट्रेनिंग और आर्टस कालिज चल रहे हैं। पंजाब, हरियाणा, देहली, गुड़गांव, आदि में लड़कियों की संस्थाएं चल रही हैं। पंजाब में स्त्री शिक्षा के इतिहास में भगवान देवात्मा के अनेक अनुयायियों का भी बहुत ऊंचा स्थान है।

देव समाज की गठन मे स्त्रियो के लिए उच्च पदों को प्राप्त करने का भी पुरूषों के बराबर अधिकार है। स्त्रियों की हर प्रकार की उन्नति के लिए भगवान देवात्मा ने सर्वोच्च स्थान दिया है।

स्त्री सुधार के अतिरिक्त बाकी हिंदु समाज की बुराईयों के लिए भी आंदोलन रहा है। जाति पाति के विरूद्ध तथा दहेज के विरुद्ध आंदोलन रहा है। इन प्रथाओं की निंदा की गई है। कोई ऐसी बुराई नहीं, जिसको छोड़ने का देव धर्म में प्रोत्साहन न हो। देव धर्म में समाज सुधार के कार्य में प्राचीन वा नवीन प्रथाओं को तभी मान्य समझा गया है यदि वह समाज के सुधार को आगे बढ़ाएं। संकीर्णता के युग में भगवान देवात्मा ने उदारवादी रुख अपनाया। वह एक आदर्श सुधारवादी थे, क्योंकि सब जगतों के प्रति उनके भीतर अथाह हित अनुराग था।

देवात्मा देव धर्म संस्थापक के रूप में

जैसे कि पहले लेख में आप पढ़ चुके हैं कि भगवान देवात्मा एक ऐसे अनोखे सुधारक थे जो कि सुधार का ढोंग करने वालों के साथ मेल नहीं रख सकते थे। ब्रह्मों समाज में समाज के सुधार वा जीवन के विकास की अनुकूल परिस्थिति न पाकर उन्होंने एक नई विचारधारा को जन्म दिया, जिसे हम देव ध र्म कहते हैं। उन्हें उच्च चरित्र वा उच्च जीवन को अपने धर्म में मुख्य और स्थान दिया।

सर्वप्रथम देव धर्म के सभासद के लिए आवश्यक कर दिया कि वह आठ मोटे पापों से विरत हो अर्थात मांसाहार, नशे, धूम्रपान, रिश्वत, जीव हत्या, बेईमानी और जुआ आदि से विरत हो। देव ध र्म का मुख्य कार्य लोगों से पाप छूड़ाने से शुरू हुआ। किसी भी धर्म समाज में उसके सभासदों के लिए इस प्रकार की प्रतिज्ञाएं नहीं मिलती। इस प्रकार एक नई समाज का निर्माण हुआ। बाकी धर्मो में पूजा पाठ, ईश्वर का जाप वा दुनियां से वैराग्य की शिक्षा दी जाती है और इससे वह खूब तसल्ली में रहते हैं। इन पापों से बचाने का गौरव देव धर्म को ही प्राप्त है।

उच्च जीवन प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम मोटे पापों से बचना आवश्यक है। इन पापों के द्वारा जो अन्याय होते हैं, उनसे बचने पर जहां व्यक्ति की अपनी रक्षा होती है, वहां उससें संतप्त व्यक्तियों को ठण्डक पहुंचती है। यह धर्म जीवन प्राप्ति की पहली सीढ़ी है। उसके देव धर्म में वैराग्य की शिक्षा नहीं, बल्कि सम्बंधों में कैसे तालमेल बिठाया जाए, यह सिखाया जाता है। देव धर्म ने माता पिता, भाई बहन, पति पत्नि, परलोक, समाज, जाति, देश और मनुष्य जाति के साथ घनिष्ट सम्बंध को उपलब्ध करने और इन सम्बन्धों में स्नेह, कृतज्ञता वा परिशोध भावना से जुड़ने के लिए मानवता को जाग्रत और उन्नत करने का नया संदेश दिया है। सब धर्मों में ईश्वर को ही मुख्य सम्बंधी बताकर उसकी पूजा अराधना में लोग लगे रहकर अपने आपको धर्मवान समझते रहते हैं।

भगवान देवात्मा उस समय ईश्वर का विश्वास रखते थे, परन्तु ईश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा रखकर भी उन्होंने न केवल दूसरे सम्बंधों को नकारा नहीं बल्कि सम्बंधों में उच्च जीवन पैदा करने को ही ध र्म में स्थान दिया। उन्होंने हमारे सब सम्बंधों को सोलह भागों में बांट दिया और उन सम्बंधों में हमारे कर्तव्य कर्म क्या होने चाहिए और वर्जित कर्म क्या होने चाहिए इनका विस्तार पूर्वक पू० देव शास्त्र भाग 4 में उल्लेख किया। ऐसी सम्बंधों में शिक्षा किसी धर्म मत में नहीं मिलती। अनेक धर्मो में केवल ईश्वर के साथ सम्बंध बताया जाता है अर्थात माता पिता, भाई बहन, पति पत्नि और जाति के सम्बंध को मिथ्या कहकर और इन सम्बंधों के लिए स्नेह, कृतज्ञता, सराहना और सेवा को मोह कहकर उनके सम्बंध में कर्तव्यों के प्रति उदासीनता पैदा की जाती है। लेकिन देव धर्म सम्बंधों में उन भावों के विकास को प्रमुख स्थान देता है। देव धर्म के अनुसार सब सम्बंधों में उच्च कर्तव्य पालन करने का नाम ही धर्म है।

इससे आगे देव धर्म में न्याय भाव के विकास की शिक्षा दी जाती है। न्याय भाव का अर्थ है दूसरों के अधिकारों को पहचानना। भावुक रूप से स्वीकार

करना और व्यवहार में लाना। यही भाव समाज में न्यायमूलक सामाजिक संस्थाओं का आधार है। लड़कियों के लिए स्कूल और कालिज खोलकर स्त्रियों के लिए न्यायपूर्ण संस्थाओं का आयोजन किया गया है। जाति पाति का विरोध छूतछात का विरोध, समाज के दलित वर्ग को न्याय देने के लिए देव धर्म ने किया।

देव धर्म में धर्म जीवन में आगे विकास के लिए प्रावधान बताया है कि मनुष्य परसेवा के द्वारा और अपना स्वार्थ त्याग करके ही धर्म जीवन में विकसित हो सकता है। परसेवा के बिना धर्म एक ढोंग है।

इससे आगे देव धर्म का महत्वपूर्ण अंग, जो कहीं सुनने को भी नहीं मिलता वह है हानि-परिशोध। मनुष्य अपने और अन्य सम्बंधों में हानिकारक व्यवहार करता रहता है। मनुष्य शराब, मांसाहार और अन्य पाप कर्मो द्वारा अपनी हानि करता है और दूसरों की हानि करता है। वह सम्बंधों में घमंड, घृणा, स्वार्थ, ईर्ष्या द्वेष के द्वारा महा अनर्थ करता है। ईश्वर उपासक होकर भी करता है। इस प्रकार वह अन्यायकारी बनता है। अपने निकटी सम्बंधों में ही मनुष्य स्वार्थी रहकर कर्तव्य पालन नहीं करता तो परेसवा तो बहुत ऊंचा स्तर है। देव धर्म में मनुष्य के बुरे कर्मो, अभावों असफलताओं के घृणित रूप को दर्शाया जाता है और उसके लिए घृणा और दुख पैदा किया जाता है। केवल यही नहीं कि आगे के लिए ऐसे व्यवहार न करने की शिक्षा दी जाती है, बल्कि पहले किए हुए व्यवहारों के प्रति घृणा पैदा करके उनका परिशोध करवाया जाता है। कृतध्न वा अन्यायकारी पतियों के हाथों से सताई, तड़पाई गई पत्नियों के पतियों ने भरी सभाओं में उनके पैरों में गिर कर क्षमा मांगी है। गुस्ताख बच्चों के हाथों माता पिता नर्क की ज़िन्दगी जी रहे थे, उनको कृतज्ञ बनाकर पिछले दुर्व्यवहारों के लिए क्षमा याचना कराई गई है। देव धर्म का यह अनोखा वा सुन्दर पहलु है, जो कहीं देखने को नहीं मिलता।

दुनियां के इतिहास में यह पहला धर्म है, जिसने केवल शिक्षा ही नहीं दी बल्कि उस शिक्षा को लोगों के जीवन में उतारा है। वैराग्य सिखाया ही नहीं बल्कि सम्बंधों में जीना सिखाया है। देव धर्म का लक्ष्य सब सम्बंधों में सात्विकता वा स्नेह को लाना है। साधारणता वैराग्य का अर्थ सम्बन्धों से उदासीनता या सम्बंधों से कटने में है। सम्बंधों में कोई बुराई नहीं। यदि सम्बंध स्वार्थ वा हानिकारक मोह पर आधारित हों तो ऐसे भावों से वैराग्य सच्चा वैराग्य है। परन्तु यदि सम्बंध स्वार्थ के स्थान पर निस्वार्थ सेवा वा कर्तव्य पर आधारित हों तो मनुष्य के अध्यात्मिक जीवन के लिए वरदान हैं क्योंकि इन सम्बंधों के बिना तो मनुष्य का जीवन ही सम्भव नहीं।

देव धर्म इस दुनियां के सब जगतों के साथ सात्विक भावों द्वारा उच्च मेल और शान्ति स्थापित करता है। इसलिए देव धर्म हमारे परम पू० भगवान भगवान देवात्मा की हमारे लिए आद्वतीय देन है।

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने , कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। :-

श्रीमान बलदेव सिंह जी,
House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 2716914

भगवान देवात्मा ईश्वरवादी न रहकर विश्ववादी के रूप में

भगवान देवात्मा बचपन में सनातन विश्वासों के अनुसार अपने ठाकुरों की पूजा करते थे। रुड़की कालेज में रहने के दिनों में उन्होंने अपने गुरु ऋषि शिवदयाल सिंह जी के ब्रह्म सम्बंधी विश्वास को स्वीकार किया। वह वेदांत चिन्तन में आत्म कल्याण समझ कर अपना ब्रह्म ध्यान करते थे। लाहौर में ब्रह्मों समाज के सम्पर्क में आने से उनका विश्वास अपुरुष-ब्रह्म की जगह पुरूष-ईश्वर में बदल गया। वह ईश्वरवादी बन गए। ब्रह्मों समाज में इनका ईश्वर भक्ति में अद्वितीय स्थान है। अपने ईश्वर सम्बंधी पूजा और प्रेम के प्रति आप यूं लिखते हैं: "ईश्वर के प्रति प्रेम के उत्पन्न और उन्नत करने के लिए मैं प्रतिदिन कई कई घंटे अनेक बार तीन 2 चार 2 घण्टे उपासना का साधन करता था, जिसमें उनकी स्तुति या वन्दना करके और उनकी महिमा सम्बंधी एक या दूसरे प्रकार की सुन्दर मानसिक छवि खींच कर अपने सन्मुख लाना, और इस छवि को लगातार सन्मुख रखकर उनके प्रति प्रेम भाव को उत्तेजित करना शामिल था। उनके 'दयालु' और 'मंगल' रूप का ध्यान करके उनके प्रति अपने भीतर कृतज्ञ भाव का उद्दीपन करना और उनसे अपने एक या दूसरे अभाव के दूर और उच्च भाव को उन्नत करने के लिए प्रार्थना करना और ऐसे ही विविध भावों को बढ़ाने में सहायकारी भजनों का गान करना .... होता था। दिन के भिन्न रात को भी अनेक बार ऐसे साध न होते थे। कितने काल तक प्रति बुद्धवार की रात्रि को, ऐसे जलसे होते थे, कि जो 'ईश्के-इलाही' के जलसे कहलाते थे और यह जलसे कभी कभी प्राय: सारी रात तक रहते थे। इन प्रेमवर्धक साधनों में अनेक बार प्रेम और आनन्द के गहरे उच्छवास से परिचालित होकर, कभी मैं नृत्य करता था कभी हरिगुण गाता था, कभी हरि नाम की जय ध्वनि करता था, कभी फूट फूट कर रोने लगता था कभी जोर से हंस पड़ता था, कभी विह्वल होकर ज़मीन पर गिर पड़ता था-इत्यादि।" भगवान देवात्मा इतने प्रसिद्ध ईश्वर भक्त थे, कि जब वह महाऋषि देवन्द्र नाथ टैगोर से कलकते में मिले तो उन्होंने भगवान देवात्मा की 'पंजाब के गुरु नानक' के शब्दों से सराहना की।

इतने ईश्वरीय प्रेम और ईश्वर को सहारा समझ कर भी जब उनके सत्य अनुराग द्वारा यह उपलब्धि हुई कि वैज्ञानिक विधि ही सत्य ज्ञान की विधि है तो उन्होंने अपने ईश्वर विश्वास की वैज्ञानिक विधि द्वारा परख की और उन्होंने अनुभव किया कि ईश्वर का विश्वास मिथ्या है। उन्होंने विज्ञान पर आधारित निम्नलिखित कई एक दार्शनिक किताबों Herbert Spencer; First Principle, Henry Drummond; Ascent of Man; and Natural law in the Spiritual World; John Fiske; Outline of Cosmic Philosophy, Charles Darwin; Origin of Species का भी अध्ययन किया और इससे उनका ईश्वर के होने का शक गहरा होता गया। ईश्वर पर शक उनके जीवन के लिए सबसे बड़ा आघात था जैसे किसी की सारी उम्र की कमाई गवर्नमेंट की ओर से गैरकानूनी घोषित होने पर कौड़ियों के भाव रह जावे। उनके लिए

ईश्वर पर विश्वास छोड़ना अपने जीवन की सारी इमारत को गिराने के समान था। यह जीवन की जड़ों को सिंचाई करने वाली ज़मीन से उखाड़ फेंकने के समान था। पू० भगवान लिखते हैं : मेरा हृदय ईश्वर के गहरे विश्वास और भक्ति भाव से परिचालित होकर रो रो कर और चिल्ला चिल्ला कर यह कहता था कि मैंने आज तक जिसे अपना स्वामी समझा है, जिसे अपना ज्योतिदाता, शक्तिदाता, आनन्द और रसदाता अनुभव किया है, जिसे अपने प्राणों का प्राण और जीवन का जीवन जाना है, जिसकी इच्छा पालन करने ओर जिसके साथ सर्वदा मेल रखने के लिए मैंने सब प्रकार का महात्याग स्वीकार किया है.... जिसके चरणों में मैंने अपने आप को पूर्णतः अर्पण करके तरह तरह का घोर से घोर दुःख उठाया है... क्या मेरे ऐसे परम सम्बंधी का अस्तित्व केवल कल्पना हो सकता है? क्या जिसके अस्तित्व पर लाखों जन विश्वास रखते हैं, वह विश्वास मिथ्या ही है? क्या मैं अपने ऐसे प्राणाधर और जीवन के अवलम्बन को, अपनी इस परम सम्पद और अपने इस परम धन को यूंही खोने के लिए तैयार हो सकता हूं। अपने उस परम आश्रय को खोकर किस प्रकार स्थिति कर सकता हूं। कदापि नहीं, कदापि नहीं।

"इधर मेरे विश्वासी हृदय की यह कन्दन ध्वनि थी, उधर सत्य अनुराग से परिचालित मेरे ज्ञान कोष की यह ललकार थी कि 'हे हृदय! तू अंधा मत बन'। तेरा विश्वास सत्य मूलक नहीं किन्तु असत्य और भ्रान्ति मूलक है। कल्पित विश्वास का गहरा संस्कार चाहे तुम्हें कैसा ही प्रिय प्रतीत होता हो, परन्तु उसके त्याग के बिना तेरे उच्च विकाश का पथ कदापि लगातार खुल नहीं सकता। हे हृदय तू किसी साधारण आत्मा का हृदय नहीं जिसके भीतर एक या दूसरे प्रकार के सच्चे या झूठे संस्कारों का वास हो, परन्तु सत्य अनुराग वर्तमान न हो। तेरे भीतर बहुत काल से सत्य विषयक अनुराग उत्पन्न ओर विकसित हो चुका है ... फिर तू यह मिथ्या विश्वास रखकर अपने इस सत्य अनुराग को क्योंकर संतुष्ट कर सकता है? कभी नहीं और किसी तरह नहीं"।

कठिन संघर्ष के बाद उन्होंने ईश्वर विश्वास को त्याग दिया और देवात्मा ब्रह्मवादी की जगह पर विश्ववादी बन गए।

भगवान देवात्मा इष्ट देव के रूप में

भगवान देवात्मा की सबसे बड़ी विशेषता और श्रेष्ठता उनके जीवन में है। पिछले लेखों में भगवान देवात्मा के रूप पर जो आपने पढ़ा हैं, वह केवल शिक्षा नहीं, उनके देव जीवन के प्रतिबिम्ब है। उनका अद्वितीय जीवन क्या है जो उन्हें सब मनुष्यों से वे चाहे ऋषि, मुनि या पैगम्बर या धर्म संस्थापक क्यों न हो, भिन्न करके इष्ट देव होने की पदवी देता है।

हम मनुष्यात्माओं का स्वभाव यह है कि हमारे विचार वा व्यवहार कितने ही श्रेष्ठ क्यों न हों, वह सुख के अधीन हैं, सत्य के अधीन नहीं। हमारी भारतीय धर्म की शिक्षाओं में यही मिलता है कि किस प्रकार मनुष्य दुख से मोक्ष पा सकता है और आनन्द की अवस्था को प्राप्त हो सकता है।

भारतीय दर्शन में शारीरिक सुखों और अहं सम्बंधी सुखों पर संयम और त्याग के लिए शिक्षा है, चाहे वह आपको सम्बंधों के त्याग से मिले या जंगलों में एकाकी रहने से मिले। शारीरिक सुखों का त्याग इसलिए नहीं बताया गया कि वह सत्य और शुभ के मार्ग से बेमुख करते हैं, वह इसलिए कि यह सुख अस्थाई हैं और बाद में इनसे दुख मिलता है और इनका कोई आध्यात्मिक पक्ष भी है, उस विषय में हमें कोई शिक्षा नहीं मिलती। किसी गुरु ने यह नहीं देखा और बताया कि शारीरिक, मानसिक, सात्विक और आध्यात्मिक सुख जब हमें सत्य से बेमुख करते हैं तो त्यागने योग्य हैं।

भगवान देवात्मा ने अपने सत्य और हित अनुराग से उत्पन्न ज्योति में शारीरिक और अहं सम्बंधी सुखों के प्यार का जो अति घृणित नैतिक पक्ष प्रस्तुत किया है, वह किसी दार्शनिक, यहां तक कि शंकराचार्य जैसे महान दार्शनिक के दर्शन में भी नहीं मिलता।

शारीरिक और अहं के सुखों का प्यार हमें सम्बंधों में कठोर बनाता है, हमसे दूसरों के अधिकारों का निरादर कराता है और उन्हें छीनने पर प्रेरित करता है। हमें अन्यायपूर्ण बनाता है। हमारी आध्यात्मिक अवस्था को विकृत करता है। हम अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा समझने लगते हैं।

केवल शारीरिक और अहं सम्बंधी सुखों के प्यार ही हमें असत्य और अशुभ के पथ पर नहीं ले जाते, किन्तु हमारे सात्विक सुखों के प्यार भी हमें असत्य और अशुभ के पथ पर ले जाते हैं। जब हमें गरीबों की सेवा में सुख मिलने लगता है, तो हम गरीबों के पक्षपाती बन जाते हैं, उनके दुखों को बढ़ा चढ़ा कर बताते हैं ताकि उनके लिए अधिक सहायता व सहूलियतें प्राप्त कर सकें। कार्ल मार्क्स के दिल में मजदूरों की आर्थिक दरिद्रता के प्रति हमदर्दी और न्याय के अति प्रबल सात्विक भाव थे। उन्होंने मजदूरों की इस दुखी अवस्था को बदलने की धुन में हिंसा और असत्य के साधनों के प्रयोग की आज्ञा दे दी। उनके हमदर्दी के भाव ने उन्हें हिंसा और असत्य के मार्ग से नहीं रोका। अधिकतर हम मनुष्यों का दया भाव कई बार न्याय के पथ से विपथ कर देता है। यदि हम किसी चुनाव सम्मति में हों और किसी उम्मीदवार को चुनना हो तो न्याय की मांग यह है कि उस उम्मीदवार को चुना जाए जो शिक्षा, प्रशिक्षण और कार्य अनुभव में श्रेष्ठ हो परन्तु यदि हम में दया भाव ज़्यादा प्रबल है, तो हम उस

उम्मीदवार को चुनना चाहेंगे जो शरणार्थी है गरीब है, बेशक संस्था के लिए वह कुछ भी लाभदायक न हो। हमारे उच्च से उच्च सात्विक जीवन में सत्य से विपथ होने की प्रवृति है।

सुख का प्यार हमारे सामाजिक जीवन में केवल असत्य और बुराई की ओर जाने की प्रवृति ही पैदा नहीं करता, वह सूक्ष्म रूप से हमारी दार्शनिक बुद्धि को भी विपथ करता है। आज के वैज्ञानिक युग में हम खूब समझते हैं कि यह धरती कैसे बनी, मनुष्य की उत्पति कैसे हुई, दुनियां में प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। ईश्वरवाद, ब्रह्मवाद यह सब मिथ्या दर्शन हैं। यह संसार मिथ्या नहीं, पूर्णत: सत्य है, परन्तु पुराने सड़े गले विश्वासों के हम इतने पक्षपाती बन जाते है कि उन्हें मिथ्या जानकर भी हम छोड़ना नहीं चाहते, उसी में हमें सुख मिलता है, यही कारण है कि मिथ्या का दायरा विशाल होता जाता है।

परम पू० भगवान देवात्मा जिनके विचार और व्यवहार सदा सत्य और शुभ के अधीन थे, उन्होंने सुख के स्वभाव को अपनी सत्य और हित की रोशनी अर्थात देव ज्योति में अध्ययन किया और देखा कि मनुष्य असत्य और अशुभ की ओर जाने की प्रवृति रखता है। उन्होंने यह घोषित किया कि मनुष्य के जीवन का उद्देश्य सुख के पीछे जाना नहीं चाहे वह सुख कितना भी सुखदायक क्यों न हो। उसे अपने विचार और व्यवहारों को सत्य के नियम के अनुसार ढालना है। ऐसा आदर्श मनुष्य बनना मनुष्य के वश की बात नहीं। उसकी अधिक से अधिक पहुंच सात्विक सुखों तक है। उसके लिए मोक्ष तभी सम्भव है यदि वह अपने सात्विक भावों द्वारा देवात्मा के साथ योग करे और उनकी ज्योति और शक्ति को पाकर अपने विचार और व्यवहार करे।

इससे आगे भगवान देवात्मा का इष्ट देव होने का यह कारण है कि उनके भीतर सत्य और हित अनुराग हैं। उसका प्रमाण उनका देव जीवन है।

1) उन्होंने 32 साल की आयु में अपने जीवन का आदर्श निम्नलिखित पंक्तियों में घोषित किया:

"सत्य शिव सुन्दर ही मेरा परम लक्ष्य होवे,
जग के उपकार ही में जीवन यह जावे।"

पू० भगवान ने यह शिक्षा दी कि जीवन का आदर्श सुख पाना नहीं, बल्कि आत्मा को स्वस्थ बनाना है। वह तभी सम्भव है कि जब मनुष्य असत्य और अशुभकर विचारों वा व्यवहारों से मुक्त हो और सत्य और शुभकर विचारों और व्यवहारों में व्यस्त हो। यह मनुष्य जीवन का आदर्श लक्ष्य देवात्मा के भिन्न किसी ने नहीं बताया।

2) परम पू० भगवान देवात्मा ने वैज्ञानिक विधि को ही सब प्रकार के सत्यों की परख के लिए पूर्ण रूप से स्वीकार किया। भगवान देवात्मा फरमाते हैं:-

"इस समय (1895 ई०) से 'विश्वतत्त्व' और 'मनुष्य तत्त्व' मेरे अध्ययन के मुख्य विषय बन गए। इनके ठीक अध्ययन के लिए जिस वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता थी उसके अनुराग ने धीरे धीरे अब मुझ पर पूर्णत: अधिकार लाभ कर लिया। परीक्षा तत्त्व का अनुराग उन्नत होते होते मुझ में अब यहां तक पहुंच चुका था और वह ठीक युक्ति तत्त्व के विकास से यहां तक मजबूत हो चुका था कि अब उसके साथ साथ कल्पना मूलक किसी मिथ्या विश्वास के वास करने की कोई गुंजाइश नहीं रही थी। सैंकड़ों चिन्ताशील मनुष्य यहां तक कि वैज्ञानिक तत्त्व खोजी भी कितने ही प्रकार के धर्म विषयक

मिथ्या विश्वासों के क्योंकर शिकार पाए जाते हैं? इसलिए कि वह

1) "या तो धर्म विषयक बातों को विश्वास की चीज़ समझते हैं, और उनके सम्बंध में वैज्ञानिक विधि के अनुसार किसी प्रकार का अनुसंधान करना ही ठीक नहीं समझते। या

2) विज्ञान को तोड़ मोड़कर उसे अपने ऐसे विश्वासों के समर्थन के लिए काम में लाते हैं।"

"सत्य अनुरागी के लिए यह दोनों ही पथ त्याज्य हैं। वह अपनी ज्योति में दोनों पक्षों को ही मिथ्या देखता है और इसीलिए दोनों को ही परित्याग करता है।"

"सत्य विषयक सारे अनुरागों में विकसित होते होते अब मैं जिस उच्च अवस्था में पहुंच चुका था, उसमें पहुंचकर मैं प्रत्येक प्राचीन या नवीन मत को वैज्ञानिक विधि के अनुसार परख कर ही ग्रहण करना चाहता था। इस विधि के अनुसार मैं उपरोक्त दोनों 'त्याज्य पथों' को त्याग कर चुका था और धर्म विषयक प्रत्येक मत व प्रत्येक बात को वैज्ञानिक विधि के अनुसार सत्य ज्ञान की चीज़ बनाना और रखना चाहता था न कि "विश्वास" की चीज़।"

धर्म के अन्य कोई भी गुरु नहीं जिन्होंने धर्म के विश्वासों में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया हो और इस विधि को अपनाने में जो भी विश्वास त्यागने आवश्यक थे, जिनकी वैज्ञानिक विधि साक्षी न देती हो, वे त्यागे हों।

वैज्ञानिक विधि के अनुसार इस दुनियां से परे कोई अस्तित्व सत्य नहीं, उसको मानना पूर्णत मिथ्या है और यह विश्वास चाहे ब्रह्म के विषय में हों या ईश्वर के विषय में, त्यागने आवश्यक हैं। परम पू० भगवान ने एक एक करके उन सब विश्वासों को त्यागा, जो विश्व के नियमों के विरूद्ध थे, चाहे वह विश्वास उनको कितने भी प्रिय क्यों न हों। पू० भगवान ने यह घोषित किया कि जड़ और शक्ति सम्पन्न अस्तित्वों और उनसे विकसित जीवित और चैतन्य अस्तित्वों की दुनियां ही एक मात्र सत्य और केवल सत्य दुनियां है और इससे बाहर कोई अस्तित्वों की दुनियां नहीं।

3) परम पू० भगवान देवात्मा ने चारों जगतों के साथ सत्य और शुभ के आधार पर सम्बंध स्थापन किए जो किसी गुरु ने नहीं किए। ईश्वरीय धर्मो के गुरु केवल ईश्वर के साथ सम्बंध को ही सत्य बताते हैं और बाकी सब सम्बंधों को मिथ्या घोषित करते हैं। उनकी सराहना प्रशंसा, स्तुति और अर्पण का विषय ईश्वर और केवल ईश्वर है और इसके अतिरिक्त कोई अस्तित्व नहीं। दलील के लिए मान भी लिया जाए कि ईश्वर है, तो भी यह कैसे इंकार हो सकता है कि माता पिता हैं, भाई बहन हैं, जीवन साथी हैं, वंश है, जाति है, देश और मनुष्य मात्र है। माता पिता जिन्होंने हमें जन्म दिया, हमें संस्कृति दी और मनुष्य मात्र जिसकी सेवाओं के बिना हम पाठ, पूजा और योग ध्यान नहीं कर सकते, उन्हें कैसे मिथ्या सम्बंधी मान लें। और उनकी सेवाओं को कैसे भूल जाएं। परन्तु ईश्वर उपासकों गुरुओं के लिए चारों जगतों अर्थात् मनुष्य जगत, पशु जगत, वनस्पति जगत और भौतिक जगत के साथ सत्य और हित मूलक सम्बंध स्थापन करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। वह इन चारों जगतों के सम्बंध मे अपने कर्तव्यों का निरादर करते हैं। उनके लिए ईश्वर या ब्रह्म ही सत्य हैं और जगत मिथ्या है। भगवान

देवात्मा इस नेचर के इन चारों जगतों को सत्य मानते हैं जैसे विज्ञान इन चारों जगतों को सत्य मानता है। वह इनके साथ अपने जीवन और मृत्यु का सम्बंध अनुभव करते हैं। इन चारों जगतों की सेवा में अपना अध्यात्मिक जीवन लगाते हैं। वे अपने साधन में अपने उपकारियों को याद करते हैं और उनके लिए मंगल कामना करते हैं। उन्होने इन चारों जगतों के सम्बंध में जो हितकर व्यवहार हैं उसका विस्तार से पू० देवशास्त्र खण्ड 4 में वर्णन किया है। इन चारों जगतों के लिए अपने दैनिक जीवन में सेवा के साधन किए हैं। कोई ऐसा धर्म गुरु नहीं जिसने मनुष्य मात्र, पशु जगत, उद्भित जगत और भौतिक जगत की सराहना में गीत रचे हों और उत्साह पूर्वक उनका गान किया हो।

4) ईश्वरवादी या ब्रह्मवादी गुरुओं के लिए इन चारों जगतों के सम्बंध में कर्तव्यों के जानने और पूरा करने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता क्योंकि वह अध्यात्मिक जीवन को ठीक या गल्त, अच्छे या बुरे से अतीत समझते हैं। यहां तक कि उनका विचार यह है कि जब व्यक्ति ईश्वर के साथ एक लय हो जाता है या एक रूप हो जाता है तो वह अच्छे और बुरे के भेदभाव से ही ऊपर हो जाता है। और यदि वह पाप मूलक व्यवहार करे तो उसके अध्यात्मिक जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

कौशिक उपनिषद का कहना है कि जो ईश्वर का ज्ञानी और भक्त है उसकी कोई आत्मिक हानि नहीं होती, यदि वह अपने माता पिता की हत्या करे या कोई चोरी करे या गर्भपात करे। जो भी वह बुराई करता है उससे कोई आत्मिक दोष नहीं होता।

भगवद्गीता का कहना है कि जो मनुष्य अपने अहं से मुक्त हो गया है और जिसकी आत्मा पवित्र है वह चाहे सब दुनियां के जीवों की हत्या करे तो भी वह काई हत्या नहीं करता।

परम पू० भगवान देवात्मा सत्य और शुभ अनुरागी थे। उन्होंने लिखा है कि मेरे लिए किसी बुराई को जानकर उसे करना असम्भव है। इस सत्य और शुभ अनुराग के कारण ही उन्होंने केशवचन्द्र जी का विरोध किया और जब उन्होंने कहा कि यदि ईश्वर किसी को चोरी करने का आदेश दे तो हम मनुष्य कौन हैं जो ईश्वर के आदेश पर सवाल करें। भगवान देवात्मा के लिए ईश्वर जो चोरी का आदेश दे सकता है, वह ईश्वर क्यों कर हो सकता है।

5) ईश्वर विश्वासी यह मानते हैं कि जब किसी का ईश्वर के साथ योग हो जाता है, तो और सब सम्बंध गायब हो जाते हैं। परन्तु भगवान देवत्मा सत्य अनुरागी हैं। उनके साथ जो योग करता है, उसे यह रोशनी मिलती है कि सब सम्बंधों का हम सब पर ऋण है, उस ऋण को चुकाने की शक्ति भी भगवान देवात्मा से मिलती है। उसे सात्विक परोपकार के जीवन की सुन्दरता अनुभव होती है, ऐसी जिन्दगी उसे सराहनीय लगती है और उसे अपनाने की प्रेरणा मिलती है। सत्य और शुभ के मार्ग की कुछ जागृति पैदा होती है, उस पर कुछ न कुछ अपनी योग्यतानुसार चलने की सामर्थ्य मिलती है।

6) इसके अतिरिक्त देवात्मा ने जो आत्मा के विषय में विज्ञान पर आधारित तत्वों की खोज की वह और किसी गुरु ने नहीं की। सत्य और शुभ के अनुरागों के बिना ऐसी खोज सम्भव ही नहीं थी।

उपरोक्त सच्चाईयां इस बात की साक्षी हैं कि भगवान देवात्मा ही एक मात्र ईष्ट देव हैं।

भगवान देवात्मा धर्म के वैज्ञानिक के रूप में

हमारे गुरु, भगवान देवात्मा ने ईश्वर विश्वास के त्याग करने पर धर्म दर्शन में नया अनुसंधान आरम्भ किया। जब ईश्वर नहीं तो धर्म क्या है? मनुष्य के आत्मा का आरम्भ और भविष्य क्या है? हमारे गुरु जी धर्म के पहले वैज्ञानिक दार्शनिक हैं जिन्होंने धर्म की नींव नेचर के उसके नियमबद्ध जड़ शक्ति विशिष्ट विश्व पर रखी।

भगवान देवात्मा ने विश्व और आत्मा के विषयों को अपने अनुसंधान का लक्ष्य बनाया। उन्होंने फरमाया कि :

1) नेचर में जड़ शक्ति विशिष्ट जीवित शक्ति या जीवित शरीर अर्थात् शरीर और आत्मा विशिष्ट अस्तित्व सदा बदलते रहते हैं शक्ति अपने द्वारा जड़ पदार्थो को बदलती रहती है और अपने इस कार्य से आप भी नाना रूपों में परिवर्तित होती है। विश्व में नाना प्रकार के आकार और अन्य घटनाएं इन्हीं दोनों के परिवर्तन से उत्पन्न होती हैं।

2) परिवर्तन शक्ति और जड़ के स्वभाव के अनुसार होता है और इसलिए एकरूप (Uniform) होता है। अस्तित्वों के एक रूप व्यवहार को अस्तित्व का नियम कहते हैं।

3) परिवर्तन दो प्रकार के होते हैं। कुछ परिवर्तन ऐसे होते हैं जो अस्तित्व को बनाते और बढ़ाते हैं। कुछ परिवर्तन ऐसे होते हैं जो उसके अस्तित्व को बिगाड़ते और नाश करते हैं। हमारे शरीर के अंगों का स्वस्थ्य कार्य उसे बनाए रखता है। हमारे शरीर के अंगों का कार्य शरीर का नाश करता है। परिवर्तन केवल अस्तित्वों को बनाए नहीं रखता लेकिन उनमें नए गुण भी पैदा करता है। जब परिवर्तन ऐसे नए गुण पैदा करे जो अस्तित्व की रक्षा के अतिरिक्त उसे अधिक योगदान और गुणवान बनाए तो उसे विकासकारी परिवर्तन कहते हैं और गुणों का जो परिवर्तन इसके विरूद्ध हो उसे विनाशकारी परिवर्तन कहते हैं। उदाहरणार्थ जीवित अस्तित्व का आदि रूप एक सैल का था। इसमें कोई अंग न थे। लेकिन कुछ सैलों में ऐसी परिवर्तन करने योग्यता थी कि जो दूसरे सैलों के साथ मिलकर एक रूप होकर नई गठन बनाने की शक्ति रखते थे और इस प्रकार बहु सैल गठन के जीवधारी इस पृथ्वी पर प्रकट हुए। हम मनुष्य जीवित अस्तित्वों के विकास की लड़ी में से एक हैं और हमारी शारीरिक गठन करोड़ों सैलों के आपस में मिलकर काम करने और कई एक अंगों के निर्माण करने के फलस्वरूप है। इसी प्रकार जीवित शक्तियों ने भी जीवित शरीर की न्याई विकास किया है। उन्होंने निम्न श्रेणी की दुख सुख भावशीलता से बढ़ते बढ़ते मनुष्य में प्रत्यक्ष अनुभव, स्मृति, कल्पना, तर्क और भाव शक्तियों की गठन बना ली है। जैसे हमारा जटिल शरीर सरल जीवित शरीर से आरम्भ हुआ वैसे हमारा आत्मा पौधों के दुख सुख की भावशीलता की अवस्था से उठकर मानसिक और भावुक शक्तियों की जटिल गठन को प्राप्त हुआ है।

4) स्पष्ट है कि शरीर और आत्मा परिवर्तन के नियम के फल हैं और इसलिए दोनों ही परिवर्तनशील हैं। यह मिथ्या विश्वास है कि शरीर तो बदलता रहता है परन्तु आत्मा नहीं बदलता। जब दोनों ही परिवर्तन की उपज हैं तो दोनों ही परिवर्तन के अधीन हैं। आत्मा अजन्मा नहीं, आत्मा अमर नहीं, आत्मा निर्लेप नहीं, आत्मा इस नेचर से बाहर का अस्तित्व नहीं। इसका आरम्भ और भविष्य नियमबद्ध ही है।

5) शरीर के स्वस्थ कार्य करने के नियम हैं और इसी प्रकार आत्मा के स्वस्थ कार्य करने के नियम हैं। शरीर के स्वस्थ कार्य करने के लिए पौष्टिक भोजन, व्यायाम, साफ हवा और पानी स्वास्थ्य पूर्ण और शुभकर परिस्थितियां है। इसके विरूद्ध अपाच्य भोजन या शराब, तम्बाकू और सुस्ती शरीर के लिए अस्वास्थ्यपूर्ण और इसलिए अशुभकर व्यवहार है। आत्मा के लिए सत्य विचार और सात्विक भाव शुभकर हैं। मिथ्या विश्वास और असात्विक भाव अशुभकर हैं।

6) मनुष्य में इतनी सामर्थ्य नहीं कि वह अपने आप अशुभकर भावों से मोक्ष पावे और शुभकर भावों की काश्त करे। धर्म मनुष्य के इस मोक्ष और विकास की आवश्यकता को पूरा करने का साधन है। धर्म पाठ पूजा का नाम नहीं, प्रार्थना का नाम नहीं, योग साधनों का नाम नहीं, अपने नीच स्वभाव से मोक्ष और उच्च स्वभाव में विकास का नाम है। यदि हमारा साधन हमें सात्विक सेवा के लिए प्रेरणा और शक्ति न दे और अपने स्वार्थ और अहं के लिए घृणा ओर उन्हें त्याग करने की शक्ति न दे तो वह धर्म साधन नहीं। यह दोनों परिवर्तन ही धर्म साधन की कसौटी हैं।

7) ऐसे धर्म साधन करने की मनुष्य में अपने आप योग्यता नहीं। उसे गुरु की जरूरत है। वह ही मनुष्य का सच्चा गुरु है, जिसके साथ योग द्वारा मनुष्य सात्विक भावों के विकास की प्रेरणा और शक्ति पा सके और अपने किसी नीच भावों या प्रेरणाओं से मोक्ष पा सके।

8) ऐसे गुरु वह ही हो सकते हैं जो सत्य और शुभ अनुरागी हों अर्थात् देवात्मा हों। देवात्मा वह हैं जिनका आत्मा हित अनुराग के कारण सब विनाशकारी भावों से मुक्त हो और जिनकी सात्विक भावों की गठन पूर्ण हो और प्रत्येक सात्विक भाव विस्तार, गहराई और परिपाटी में पूर्ण हो ताकि वह चारों जगतों के साथ हितकर सम्बंध स्थापित कर सकें। देवात्मा वह आत्मा हैं जिनमें सत्य अनुराग के कारण सब मिथ्याओं का त्याग करने की योग्यता हो, और जिनके सब सम्बंध और व्यवहार सत्य तथा शुभ पर आधारित हों और जो आत्मिक जीवन के सम्बंध में वैज्ञानिक खोज कर सकें। ऐसे सत्य और हित अनुरागी देव जीवन में मनुष्य को आत्मिक सत्यज्ञान और सात्विक जीवन प्रदान करने की सामर्थ्य है।

हमारे गुरु देवात्मा हैं। कोई गुरु नहीं जिन्होंने अपने में हित अनुराग स्थित सब सात्विक शक्तियों का विकास किया हो और चारों जगतों के साथ सम्बंध जोड़कर उनके साथ सदा हितकर व्यवहार किया हो। ईश्वरवादी धर्म के बानी तो ईश्वर और केवल ईश्वर के साथ सम्बंध को जोड़ते हैं और मनुष्यों, पशुओं, वनस्पति और भौतिक अस्तित्वों के

साथ सम्बंध को मोह माया घोषित करके, उनके प्रति उदासीन रहते हैं। इसके विपरीत हमारे गुरु, भगवान् देवात्मा ने चारों जगतों के साथ सत्य मूलक सम्बंध स्थापित करके उनके प्रति कर्तव्यों की खोज करके और उन्हें अपने जीवन में पूरा करके विश्व के साथ उत्तम मेल और एकता को प्राप्त किया है। उनके इस अद्वितीय जीवन के अद्वितीय पक्षों की समझ और सराहना उनके पू० ग्रंथ "मुझ में देव जीवन का विकास भाग 1 और 2 के पाठ से हो सकती है। किसी भी ईश्वरीय धर्म के बानी ने विविध सम्बन्धियों जैसे माता-पिता, भाई-बहिन, पति-पत्नि, देश-जाति, मनुष्य मात्र, पशु, वनस्पति और उद्भित जगतों के सम्बंध में अपने कर्तव्यों का अनुसंधान करके उनके पालन को आध्यात्मिक जीवन का एक मुख्य पक्ष नहीं समझा और बनाया। हमारे गुरुजी ने इन सम्बंधों में अनुसंधान करके देव शास्त्र, खण्ड चार, में कर्तव्यों और वर्जित कर्मो का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है और स्वयं इन सम्बंधों मे कर्तव्य पालन का आदर्श दृष्टान्त पेश किया है।

इसी प्रकार हमारे गुरुजी पहली धर्म प्रतिभा हैं जिन्होंने आत्मा के अनुसंधान में वैज्ञानिक विधि को पूर्ण रूप से अपनाया है। आत्मा का अनुसंधान तो प्राचीन समय के विख्यात दार्शनिक और धर्म प्रतिभाएं करती आई हैं परन्तु उनके अनुसंधान की विधि कल्पना मूलक रही, उस समय विज्ञान का ही अस्तित्व नहीं था, विज्ञान के नियमों को जाने बिना पुरानी सब खोजें कल्पना पर ही आधारित हो सकती थीं। आधुनिक कहलाने वाली धर्म प्रतिभाएं जैसे श्री अरविन्दु, श्री रमण और अन्य रहस्यवादी धार्मिक नेताओं ने सत्य अनुराग की अनुपस्थिति के कारण वैज्ञानिक विधि को नहीं अपनाया। वैज्ञानिक विधि के अपनाने पर ही आत्मा के सत्य ज्ञान की खोज सफल हो सकती है और हमारे गुरु जी के देव जीवन में मनुष्य के लिए आत्मा को ज्योतिर्मान करने, आत्मा के रोगों से मोक्ष देने और सात्विक भावों के विकास द्वारा हमारी आत्मा की रक्षा करने और उसकी शक्ति और स्वास्थ्य को बढ़ाने की पूर्ण सामग्री है।

यह आठ सिद्धांत देव धर्म दर्शन के सिद्धांत हैं और यह देव धर्म दर्शन देवात्मा को अद्वितीय धर्म दार्शनिक का स्थान देते हैं।

भगवान देवात्मा की पूजा क्या?

भगवान देवात्मा की पूजा है, भगवान देवात्मा के आगे झुकना। भगवान देवात्मा के आगे सिर का झुकना, हृदय का झुकना। सिर को झुकाने की तो मनुष्य को समझ है, परन्तु दिल के झुकने की उसको उस प्रकार की समझ नहीं। इसकी समझ के बगैर पूजा की समझ कठिन है।

भगवान देवात्मा का सेवक होकर, बहुत पुराना वा उच्च श्रेणी का सेवक होकर, भगवान देवात्मा का प्रचारक वा कर्मचारी होकर, भगवान देवात्मा के मिशन में सभाएं करवाने वाला होकर, लेख लिखने वाला होकर, मिशन के प्रबंध में उच्च से उच्च पदवी धारी होकर, सारी उमर निष्काम सेवाकारी कर्मचारी होकर, किसी किसी को पाप वा मिथ्या से बचाकर, साधनशील होकर भी यह जरूरी नहीं कि यह भगवान देवात्मा की पूजा करने वाला हो सकता है। प्राय: एक आध प्रतिशत को छोड़कर,

साधारण सेवक को सारी उमर भगवान देवात्मा की पूजा की कोई सोझी होनी बहुत कठिन है और वह अकसर भगवान देवात्मा की पूजा करने में असमर्थ्य ही रहता है।

भगवान देवात्मा की सुन्दर फोटो को रखकर, अच्छी तरह साफ करके, फूलों से सजाकर, भजन गाकर, देव स्तोत्र का गान करके, व्याख्या करके, प्रार्थना करके और लेखों का पाठ करके, साधन करना और भगवान देवात्मा की सुन्दर फोटो को बार बार प्रणाम करना और बात है और भगवान देवात्मा की यह पूजा बिल्कुल ही और बात है। सेवक के लिए उपरोक्त साधन करना भी बहुत अच्छा और आवश्यक तो है, परन्तु इतने साधन से भगवान देवात्मा की पूजा नहीं होती और न ही इसके इस मर्म का पता चलता है कि यह पूजा क्या होती है।

भगवान देवात्मा की सच्ची पहचान के बिना देव पूजा का साधन हो नहीं सकता। भगवान देवात्मा ने स्वयं फरमाया है।

"मैं अज्ञात हूँ, अनादृत हूँ, घृणित हूँ, संतप्त हूँ, और परित्यक्त हूँ।"

उन्होंने यह सच्चाई सेवकों के लिए ही नहीं, कुल मानव जगत के लिए लिखी है। भगवान देवात्मा ने फरमाया है कि उन्हें एक भी जन ऐसा नहीं मिल सका कि जो उनकी प्रकृति के कुछ अनुकूल होता और पूर्ण भरोसे के योग्य होता और उनका काम उनकी तसल्ली के अनुसार कर सकता। यह बात बताती है कि भगवान देवात्मा को मानवता पहचान नहीं सकी। और गुरुओं पैगम्बरों, नबीयों या देवी देवताओं और ईष्टों को समझना उतना कठिन नहीं, भगवान देवात्मा को समझना बहुत कठिन है। जबकि भगवान देवात्मा की शिक्षा और फिलास्फी को समझना मुश्किल नहीं लेकिन भगवान देवात्मा को समझना, उनके देवरुप को समझना नामुनकिन नहीं तो अति कठिन अवश्य है। उनके देवरुप की महानता को देखना और पहचानना अति कठिन है। यह देखे बिना भगवान देवात्मा की पूजा नहीं हो सकती।

हृदय की उपयोगी अवस्था : भगवान देवात्मा की पूजा करने के योग्य होने से पहले मनुष्य के हृदय की विशेष हालत होनी चाहिए। उसका, और नीच अनुरागों को छोड़कर, कुछ विशेष नीच अनुरागों पर किसी सीमा तक नियन्त्रण अवश्य होना चाहिए। अपने पूर्वजों से प्राप्त विरासत के कारण, अपने निजी साधनों और संग्राम के द्वारा और विशेष उच्च आत्माओं की संगत की सहायता द्वारा जिन कुछ विशेष नीच अनुरागों का उचित सीमा तक दमन होना अति आवश्यक है, वह हैं :

1. काम अनुराग 2. धन सम्पति वा पदार्थ अनुराग 3. मोह अनुराग और संतान अनुराग और 4. विशेषकर अहं अनुराग।

उपरोक्त नीच अनुरागों के प्रबल अधिकार को रखकर मनुष्य के लिए भगवान देवात्मा के साथ योग करना ही कठिन है, उनकी ज्योति तक पहुंच का होना ही अत्यंत कठिन है।

अहं अनुराग का किसी अंश तक बोध प्राप्त किए बिना किसी साधक सेवक का भगवान देवात्मा तक या उनके देवरुप तक पहुंचना, उनके अमूल्य देव प्रभावों, देव ज्योति और देव तेज तक किसी अंश स्थाई रसाई हासिल करना ना मुमकिन है। और नीच अनुरागों सहित मनुष्य को अपने अहं अनुराग का बोध पाना और उसे किसी उचित सीमा तक दमन करने के योग्य होना, भगवान देवात्मा के देवरुप तक रसाई प्राप्त करने के लिए अति आवश्यक है।

अहं का अनुराग मानव समाज में सर्वव्यापी है। यह प्रत्येक मनुष्य को विरासत में बहुत प्रबल आता है। जिस प्रकार प्रत्येक बिच्छु के डंक लगा होता है, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य के अहं का डंक लगा होता है। इस डंक की उचित हार्दिक सोझी पाए बिना उच्च साधनशीलता के लिए हृदय की हालत उपयोगी नहीं हो सकती। प्रत्येक मनुष्य घमण्डी है, नीच घृणाकारी हैं, स्वार्थी हैं, मनमुख है। अपने घमंड के साक्षात दर्शन पाए बिना, अपनी नीच घृणा को साक्षात देखे बिना, अपने स्वार्थ और स्वेच्छाचारिता को साक्षात प्रत्यक्ष रूप में अपने साधनों और उच्च संगत की सहायता के साथ देखे बिना, उक्त हृदय की उपयोगी अवस्था को प्राप्त नहीं किया जा सकता।

जो मनुष्य अपने घमंड का बोध नहीं पाता, अपनी घमंड मूलक, नीच घृणा मूलक, महा स्वार्थ मूलक और स्वेच्छाचारिता मूलक, महा हानिकारक नीच गतियों को प्रकृत रूप में देख नहीं सकता और उनकी गतियों का बार बार उचित परिशोध नहीं कर सकता, वह जन हृदय की उपयोगी अवस्था को प्राप्त नहीं हो सकता और उसकी उनके देव रूप तक रसाई असम्भव है।

जो जन अपनी नीचता को सदा बार बार देख नहीं सकता, जो जन अपनी नीचता पर बार बार और नहीं सकता, वह देवरुप तक कोई रसाई प्राप्त नहीं कर सकता। जिस सौभाग्यवान जन को, अपनी नीचता बार बार दिखाई देती है, उसको रूलाती है, वह उतना ही अधिकारी है।

घमंड को, नीच घृणा को, ईर्ष्या, द्वेष भावना को प्रबल रूप में रखकर कोई मनुष्य किसी अंश भी स्थाई रूप में भगवान देवात्मा की लासानी ज्योति तक रसाई प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए भगवान देवात्मा की शरण के महा सौभाग्य को पाकर भी किसी जन के लिए उच्चं बरकतों के तथा उच्च जीवन के भंडार के दरवाज़े सदा बंद रहते हैं। वह जीवन की बाज़ी हारकर खाली हाथ इस संसार से जाने के लिए बेबस है।

अहं सम्बंधी, मान सम्मान (Name, fame) के भरसक अनुरागी, पद, प्रभुत्व, सत्ता के दास, प्रशंसा और वाह वाह के भूखे मनुष्यों के लिए उच्च जीवन के खजाने सदा बंद रहते हैं। जो उपरोक्त महारोगों में से किसी एक का कुछ भी बोधी नहीं हो सकता और उनके ऊपर उचित सीमा तक नियंत्रण नहीं कर सकता उसके लिए अद्वितीय आर्विभाव भगवान देवात्मा की शरण प्राप्ति का सौभाग्य निरर्थक होकर ही रह जाता है।

जो जन अपने प्रति दुर्व्यवहार कर्त्ताओं, अपने शत्रुओं, अपना अपमान करने वालों को भी घृणा करता है और उनके शुभ की कामना नहीं कर सकता, उनका भला करने की कोई सोच नहीं रखता, उनको मिलजुल कर उनके भले का कोई यत्न नहीं कर सकता, उन से फटा रहता है, दूर दूर रहता है, वह भगवान देवात्मा की पूजा नहीं कर सकता। जो आठ पाप त्यागी, मोटी मिथ्या के त्यागी, निस्वार्थ भगवान देवात्मा के मिशन में कुछ न कुछ अंश सफलता के साथ काम करने वालों को ही घृणा करता है, ईर्ष्या करता है, उनको शत्रु समझता है और बताता है, वह न भगवान देवात्मा का हो सकता है, न भगवान देवात्मा की पूजा कर सकता हैं न ही ऐसा जन, जिसका हृदय किसी के सम्बंध में (शत्रुओं सहित) ईर्ष्या, द्वेष और नीच घृणा से बार बार सुलगता रहता है, भगवान देवात्मा की कभी भी पूजा नहीं कर सकता। इस सम्बंध में परम पूज्नीय भगवान ने इस प्रकार फरमाया है :

"जिन मनुष्य आत्माओं में उनका महा

पतनकारी अहं अनुराग इतना अधिक हो ..... वह भगवान देवात्मा के देव प्रभावों को पाने के अधिकारी नहीं।"

भगवान देवात्मा के अतिशय महान, सुन्दर और परम हितकर देवरुप की अतिशय रोशन और अतिशय महान झलक साधक के हृदय में ज्योर्तिमान होनी अति अवश्यक है। इसके बिना भगवान देवात्मा की पूजा नहीं हो सकती, कोई देवप्रभावों की प्राप्ति नहीं हो सकती। भगवान देवात्मा के अतिशय महानरूप के मोटे अंग निम्न प्रकार हैं। इन विशेष अंगों में से किसी किसी की या सब की सुन्दर झलक के बार बार नजर आए बगैर या हृदय में चमके बगैर कोई देवपूजा का साधन नहीं हो सकता।

1. हित का पूर्ण अनुराग, 2. पाप, रहित और बुराई के प्रति पूर्ण शत्रुता, 3. सत्य का पूर्ण अनुराग, 4. झूठ, मिथ्या, कूड़ और छल कपट के प्रति पूर्ण शत्रुता, 5. देव धर्म प्रवर्तक 6. सर्वहित सम्पादक 7. देव ज्योति के सूर्य 8. देव तेज के सूर्य 9. सत्य धर्म के शिक्षक 10. पापी जन त्राता 11. पूर्ण हित विधाता 12. आत्म रूप दर्शाता 13. आत्म बोध प्रदाता 14. सत्य मोक्ष दाता 15. सत्य विकास कर्ता 16. सत्य उपास्य रूप

इस विषय में परम पू० भगवान भगवान देवात्मा ने फरमाया है :

"जो आत्मा और अधिकारी जनों की निसबत भगवान देवात्मा के देव प्रभावों के लाभ करने का और अधिकार और योग्यता रखते हों अर्थात् :-

"वह अपने आत्मा में भगवान देवात्मा के पूर्णांग हित स्वरूप की कोई झलक उपलब्ध और उसके प्रति अपने भीतर कुछ आकर्षण अनुभव कर सकते हों ....."

इसलिए अतिशय महान और अतिशय ज्योर्तिमान देवरूप की आकर्षणीय झलक, भगवान देवात्मा की पूजा के साधन करने के लिए अति आवश्यक है। उपरोक्त जो महान और विशाल देवरूप के मोटे अंग लिखे हैं, उनकी मोहनी झलक और सुन्दर चमक दमक पूजा करने वाले को अवश्य नज़र आनी चहिए। इसके बिना कोई पूजा नहीं हो सकती और भगवान देवात्मा के आगे सच्चे अर्थो में हृदय सच्चे रूप में नहीं झुक सकता। हित अनुरागी का हित स्वरूप होना, हित मूरत होना, हित स्रोत होना, हित पर निस्सार होना, रोशन रूप में चमकना चाहिए। इसकी महानता सारे संसार में निराली, और अद्वितीय दिखाई देनी चाहिए। पाप, पिशाचत, नीचता, सब प्रकार की कपटता का पूर्ण वैरागी, विरोधी, वैरी, विकर्षण रखने वाला, पाप के प्रति पूर्ण घृणा और एलर्जी रखने वाला, पाप का अद्वितीय शत्रु, पाप का नाश कर्त्ता, सब प्रकार के पाप से मुक्त कर्ता, अलौकिक, निराला यक्ता और महा रोशन रूप नज़र आना आवश्यक है। इस महानता के अनुभव के बिना कोई पूजा नहीं हो सकती।

भगवान देवात्मा के उपरोक्त महान देवरूप की किसी मोहनी झलक के नज़र आए बिना, भगवान देवात्मा के प्रति न कोई सच्चा सम्मान पैदा हो सकता है और न ही साधक इस सम्मान को वास्तविक रूप में प्रदर्शन ही कर सकता है और न ही सच्चे रूप में झुक सकता है और न ही पूजा हो सकती है।

जब तक देव रूप की मोहनी झलक के चमकने से हृदय विनीत भाव से नहीं भरता, सिर धरती पर गुरु चरणों में नहीं टिकता, हृदय उच्छवास वा अपने महासौभाग्य से नहीं भरता; अपने महा सौभाग्य अनुभव

बाकी का शेष भाग पेज 2 पर

सम्पादकीय सूचना

धर्म जीवन के इस अंक के साथ हम अपने माननीय पाठकों के लिए अंग्रेजी भाषा में एक नया "Section" आरम्भ करने जा रहे हैं जिसके विषय में हमें आशा है कि वह यूँ तो हमारे सभी पाठकों के लिए ज्ञान वर्धक एवं लाभदायक होगा ही, परन्तु हमारे विचार से यह "Section" हमारी नई पीढ़ी के लिए विशेषकर रूचिकर होगा।

इस "Section" का नाम "A Treat for the Blossoming Souls" रखा जा रहा है।

हम अपने पाठकों से यह निवेदन करना चाहेंगे कि वे विशेषकर इस Section के सम्बन्ध में अपने सुझाव एवं टिप्पणियाँ हमें अवश्य लिखकर भेजें। हमें आपके सुझावों एवं टिप्पणियों से न केवल प्रेरणा मिलेगी, अपितु इस "Section" को आपके लिए और अधिक रूचिकर एवं लाभदायक बनाने में बहुत मूल्यवान सहायता भी मिलेगी। इस सहयोग के लिए हम पहले से ही आपके प्रति आभार प्रकट करते हैं।

हर महीने हम इस Section में विशेषकर हमारी नई पीढ़ी के साथियों को आमतौर पर आने वाली समस्याओं का ध्यान रखते हुए, उन्हें उन समस्याओं को face करने में अधिक सक्षम बनाने तथा उनके जीवनों को अधिक से अधिक उच्च खुशियों और उत्साह से भरने वाले विषयों पर चर्चा करने का इरादा रखते हैं।

इस विशेष अंक में हम परम पूजनीय भगवान देवात्मा के एक लेख "देवात्मा में विज्ञान मूलक सत्य धर्म के अमूल्य और परम हितकर तत्वों का प्रकाश और मनुष्य जगत में उन के प्रचार की नितान्त आवश्यकता और उनका धीरे धीरे प्रचार" का अंग्रेजी adaptation अपने पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं जिसे हमने "परम पूजनीय भगवान देवात्मा के विशेष विशेष लेख और उपदेश -पहला भाग" नामी पुस्तक के प्रथम संस्करण पृष्ठ संख्या 214 से लिया है। हमारे पाठक इस बात को जानते होगें कि कोई भी अनुवाद मूल लेख की भावना को ठीक से व्यक्त नहीं कर सकता इसलिए मूल लेख से पूरा लाभ उठाने के लिए इसे मूल भाषा में ही पढ़ा जाना चाहिए।

क्योंकि हमारी योग्यताऐं अत्यन्त निम्न दर्जे की तथा बहुत सीमित हैं, इसलिए भी हम भगवान देवात्मा के श्री चरणों में प्रार्थना करते हैं कि उनकी सहायता व मार्गदर्शन हमें लगातार प्राप्त होता रह सके ताकि किसी अंश में हम अंग्रेजी भाषा में अपने पाठकों, विशेषकर नई पीढ़ी के पाठकों के लिए सेवाकारी होने के अपने इस मन्तव्य में सफल हो सके।

The Coming into Being of Invaluable and Most Beneficial Elements of Science Grounded True Religion in Bhagwan Dev Atma and the Dire Need of their Propagation in the Human Kingdom and Slow Propagation of the Same

Science grounded true religion is the one and only universal religion and is completely beneficial and, therefore, worth acquiring. It is the greatest loss to be deprived of its knowledge and to be a believer in false religious faiths based on imagination.

Even though there is no knowledge greater than self-knowledge, yet the number of false beliefs in respect of soul in various religious faiths on this earth far outnumber those in respect of any other subject. Due to the fact that the power of imagination has had a very strong hold over human society for thousands of years, men turned to blind faith rather than science and sing songs in its praise instead of praising science. That is why the entire foundation of man's religions was based on belief - to the extent that even at present, the declaration; "belief is the base of religion" reaches our ears from so many intellectuals.

Imagination loving human beings declare: we definitely need true knowledge for understanding facts about wheat, barley, '*moong*', '*urad*', metals like gold, silver, iron and copper; etc., but do not require any truthful knowledge and understanding about the form of our soul and about its evolution and destruction; We need only belief in this matter. Is it not true that in addition to them, various types of imaginary and baseless stories were made up several hundred years ago regarding eclipse of the sun and the moon; or about the earth on which we walk and live day and night, its stability, its shape and its several parts, i.e., in respect of seas, rivers, mountains, etc. Is it not true that lakhs of people used to believe in seas made up of milk, curd and honey and mountains made up of gold? Is it not true that lakhs of people even till today believe that the rivers like Ganges, Yamuna, Phalgun etc. are providers of salvation from sins? Is it not true that in respect of 'magic of Bengal', lakhs of people believed and possibly many still believe that

the women there keep many men with them after turning them into rams and he-goats and reconvert them into men at night? Do hundreds of people still not believe as true those stories of "फसाना अजायब" ('Fasana Ajayab') and "अलिफ लैला" ('Alif Laila') in which is described the conversion of man into monkey or dog and then again dog into man, from man to stone idol and then back to living man. Are 10 heads not implanted on the body of Ravana in Ram Leela even today and hundreds of statues not made and sold in this country even today in which Krishna is shown to be lifting Goverdhan mountain on his little finger? In addition to these thousands of false imaginary stories, which seeker of true knowledge does not know about the different types of false baseless stories packed in those books which are believed to be authored or sent by one imaginary person called all-knowing God?

Being deprived of those difficult and complete powers constituting *Dev Jeewan* (because of whose coming into being and evolution, the constitution of the soul is completed) the founders of all religions due to this inherent inability, could not know the fundamental principles of true religion and propagated several falsehoods that have brought evil, crime and suffering in their wake. On the other hand, they have failed to teach mankind extremely necessary and beneficial acts in relation to their several relationships. Yes, the way they were born or lived with an incomplete constitution from the point of view of all-sided Dev Jeewan in the process of stepwise change in human beings, they could teach only what they did teach and nothing more could be expected of them.

While it is definitely possible for a weaver bird, being what it is, to weave a nest for itself by tearing straw from the leaves of kernel with its beak, it is not possible for it to extract raw cotton from the cotton fields, separate its seeds, make cotton, spin yarn and make muslin cloth and it is not possible for a bird of other category like a crow to weave a nest like the weaver bird. In the same way, in the stepwise evolution of human kingdom, whatever incomplete constitution of the soul was possessed by the founder of a particular religion or sect, he could express only what was possible with it and nothing beyond that because it is not possible for any human being to go beyond his real nature.

But various types of false and baseless beliefs about the sun, the moon and the earth are being destroyed by the stepwise progress and propagation of the science of physics among those people in whose case it is possible for this light of the science of physics to reach and produce such a change. In the same way those extremely essential and beneficial fundamental truths concerning the science of soul which have been seen and understood by the Devatma in the light of Dev Jeewan, various false doctrines and beliefs concerning religion are also getting slowly destroyed and will continue to get destroyed as a result of the spreading of that light. Having manifested on the earth, those Dev Shakties (Highest spiritual powers) which the Devatma has evolved from within and having attained all sided complete constitution of the soul, he has taught those science-grounded truths about the soul and its constitution; its lower and higher acts, salvation from lower acts and evolution of higher life in man and the process to attain it etc. Thus the desire to know and study it has increased gradually till now, in the same way it will continue to increase in future.

As a child grows up imperceptibly slowly, in the same way truth also spreads and falsehood gets destroyed slowly and slowly. In other words, in the course of higher changes in human beings, as and when such persons continue to be born, who are able to develop awareness of distinction between truth and falsehood and can feel the need to acquire truth and not falsehood, then and then by acceptance of truth by them, its spread and propagation on the one hand and renunciation and destruction of falsehood on the other will continue to take place.

In the process of evolution of mankind in accordance with the great and immutable law of change working in this universe, it is inevitable that day by day there will be more and more spreading and propagation of truth and annihilation of falsehood. In this, no evolutionist can have any doubt even for a moment.

(Adapted from "परम पूजनीय भगवान देवात्मा के विशेष विशेष लेख और उपदेश" pp 214-219, 1st Edition, Nov. 1937).

Regd. Postal No.Pb (0050) 2003
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

महोत्सव के कार्यक्रम

परम पू० भगवान देवात्मा संस्थापक देवधर्म का 154 वां वार्षिक शुभ जन्म महोत्सव धर्मशाला 18 डी चण्डीगढ़ में धूमधाम से 25 दिसम्बर, 2004 से 28 दिसम्बर, 2004 तक मनाया जा रहा है। इस शुभ अवसर पर पहुंच कर अधिक से अधिक लाभ उठाएं।

महोत्सव के कार्यक्रम

शनिवार 25 दिसम्बर, 2004

प्रवेश सभा 4.00 बजे सायं

रविवार (इतवार) 26 दिसम्बर 2004

1. पहली सभा 8.30 बजे प्रातः

विषय : परम पूज्नीय भगवान देवात्मा का परम आवश्यक जीवनदायक सम्बंध

2. पब्लिक लैक्चर 4.00 बजे

वक्ता – प्रिंसीपल मिसिज सुरजीत बराड़

सोमवार 27 दिसम्बर
(महोत्सव का विशेष दिन)

6.30 बजे प्रातः सूर्य निकलने के समय जो कि आत्मिक जगत के सूर्य देवात्मा के शुभ जन्म का समय है, बैंड, बाजा, कीर्तन, शुभकामनाएं और जय ध्वनि

1. पहली सभा 8.00 बजे प्रातः

विषय : भगवान देवात्मा का परम लक्ष्य, उसकी सिद्धि के लिए उनका तप, उसके सम्बंध में हमारी ओर से कुर्बानियों की आवश्यकता, धन और जन की अपील।

2. दूसरी सभा 2.00 बजे दोपहर,

विषय : बच्चों की सभा और भजन प्रतियोगिता

3. पब्लिक लैकचर 4.00 बजे सायं,

वक्ता – डॉ विनोद जी खेड़ा

4. दीप माला 6.00 बजे सायं

मंगलवार 28 दिसम्बर, 2004

1. पहली सभा 8.00 बजे प्रातः

विषय : सेवक, सेविकाओं का ग्रहण, श्रेणियों में उन्नति तथा पारिवारिक अनुष्ठान

2. भाव प्रकाश

3. देव आरती का गान और जय ध्वनि

नोट : 1. कृप्या सेवक सेविका अपनी एकाकारियों के साथ शामिल हों।

2. आवश्यकता पड़ने पर किसी कार्यक्रम में परिवर्तन किया जा सकता है।

3. यात्रीगण कृप्या अपने बिस्तरे अवश्य साथ लाएं।

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए। (लाईफ़ वर्कर) मंत्री – देव – धर्म – मिशन। प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर म. नं. 3154, सैक्टर 21 – डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

सम्पादक डा० विनोद खेड़ा

Book Posts